डॉ0 शिप्रा प्रभा
सहायक प्राध्यापक
हिन्दी विभाग
मगध महिला कॉलेज,पटना
email- gyanshipra31@gmail.com

तुमुल कोलाहल कलह में

– जयशंकर प्रसाद

कविता की पृष्ठभूमि :–

किसी भी रचना के रहस्य को जानने के लिए उसकी पृष्ठभूमि जानना अत्यंत आवश्यक है, क्योंकि पृष्ठभूमि ही वह आधार है जो किसी भी रचना के उचित अर्थ को स्पष्ट करने में सक्षम है। प्रस्तुत कविता 'कामायनी' के 'निर्वेद' सर्ग से उद्धृत है। अतः कविता के अर्थ को समझने के लिए 'कामायनी' के बारे में जानना आवश्यक है।

'कामायनी' प्रसाद की अंतिम एवं आधुनिक हिन्दी साहित्य की सर्वश्रेष्ठ कृति है। इस काव्य की कथावस्तु का आधार वह प्राचीन आख्यान है जिसके अनुसार मनु के अतिरिक्त सम्पूर्ण देव–जाति प्रलय का शिकार हो जाती है और मनु तथा श्रद्धा के संयोग से मानव–सभ्यता का प्रवर्तन होता है। 'कामायनी' 15 सर्गों में विभक्त है, जिसका नामकरण विभिन्न मनोविकारों यथा– चिंता, आशा, श्रद्धा, काम, वासना, लज्जा, ईर्ष्या, आनंद इत्यादि के नाम पर किया गया है। इसके प्रमुख पात्र है– मनु, श्रद्धा और इड़ा। 'कामायनी' की कथा केवल ऐतिहासिक व पौराणिक नहीं है अपितु इसमें मनु, श्रद्धा और इड़ा पात्रों की सांकेतिक व्यंजना भी हैं। स्वयं कवि ने 'कामायनी' की भूमिका में स्वीकार किया है– 'यह आख्यान इतना प्राचीन है कि इतिहास में रूपक का भी अद्भुत मिश्रण हो गया है। इसलिए मनु, श्रद्धा और इड़ा इत्यादि अपना ऐतिहासिक अस्तित्व रखते हुए सांकेतिक अर्थ की भी अभिव्यक्ति करे तो मुझे कोई आपत्ति नहीं। मनु अर्थात् मन के दोनों पक्ष, हृदय और मस्तिष्क का संबंध क्रमशः श्रद्धा और इड़ा से भी सरलता से लग जाता है।' अतः मनु मन का, श्रद्धा हृदय का और इड़ा बुद्धि का प्रतीक है।

कामायनी की कथा – कहानी का आरंभ एक भयंकर जल–प्लावन से बचे हुए मानव–जाति के आदि–प्रवर्तक वैवस्वत मनु से होता है। मनु हिमालय की उन्नत चोटी पर बैठकर जल–प्लावन के विध्वंशकारी दृश्यों को देख रहे हैं–

'हिमगिरि के उत्तुंग शिखर पर, बैठ शिला की शीतल छाँह
एक पुरुष, भीगे नयनों से, देख रहा था प्रलय प्रवाह।'

देवताओं के विध्वंस को देखकर मनु का मन संसार से विरक्त हो जाता है। कुछ समय पश्चात् प्रकृति के कार्य–व्यापार को देख मनु के हृदय में आशा का संचार होता है और एक सुन्दर गुफा में अपना निवास–स्थान बना जीवन–यापन करने लगते हैं। लेकिन अतीत की स्मृतियाँ उन्हें कचोटती हैं, और अकेलापन उन्हें विचलित करता हैं। ऐसे में कामगोत्रजा श्रद्धा का आगमन होता है। हिमालय–दर्शन के लिए निकली श्रद्धा की दृष्टि मनु पर पड़ती है, और वह मनु से पुछती है–

'कौन हो तुम ? संसृति–जलनिधि, तीर–तरंगों से फेंकी मणि एक।

कर रहे निर्जन का चुपचाप, प्रभा की धारा से अभिषेक ?'

मनु स्वयं को भाग्यहीन बताते हुए अपना परिचय देते है। मनु के मन में जीवन–व्यापार के प्रति विरक्ति देखकर श्रद्धा उन्हें कर्म के लिए प्रेरित करती है। श्रद्धा की बातों से प्रभावित हो मनु कर्म में निरत होते हैं। श्रद्धा और मनु अपना छोटा–सा परिवार बनाते हैं। दोनों का जीवन कुछ समय तक सुखमय व्यतीत होता है। मनु किलात और आकुली नामक दो असुर पुरोहितों की बातों में आकर यज्ञ में पशु–बलि देने लगते हैं यहाँ तक कि मनोरंजन–हेतु आखेट भी करने लगते हैं। श्रद्धा इसका विरोध करती है, लेकिन मनु उसकी बात नहीं मानते और श्रद्धा द्वारा पोषित मेष की बलि दे देते हैं जिससे श्रद्धा अत्यंत दुखी हो जाती है। कुछ समय पश्चात् मनु को श्रद्धा के गर्भवती होने का पता चलता है। किन्तु, शिशु के आगमन की कल्पना उनके हृदय में आनंद का संचार नहीं करती वरन् चिंता का प्रवाह उत्पन्न करती है। उनके मन में श्रद्धा के प्रेम–विभाजन का भय समा जाता है। प्रेम–विभाजन की कल्पना से व्याकुल हो मनु श्रद्धा को उसी अवस्था में छोड़ कर चले जाते हैं।

श्रद्धा को त्यागकर लक्ष्यहीन मनु सारस्वत प्रदेश पहुँचते है। यहाँ उनकी भेंट सारस्वत प्रदेश की रानी इड़ा से होती है। इड़ा के आग्रह को स्वीकार कर मनु देवासुर–संग्राम में नष्ट सारस्वत प्रदेश के पुननिर्माण में लग जाते हैं। परन्तु यहाँ भी उनके मन को शांति नहीं मिलती। वे इड़ा और सारस्वत प्रदेश पर अपना पूर्ण आधिपत्य चाहते थे जिसके कारण प्रजा विद्रोह कर देती है और मनु घायल होकर गिर पड़ते हैं।

इधर मनु और प्रजा के बीच हुए संघर्ष का आभास श्रद्धा को स्वपन में होता है और वह व्याकुल होकर अपने पुत्र मानव के साथ मनु की खोज में निकल पड़ती है।

यहीं से निर्वेद सर्ग का आरंभ होता है। भयंकर युद्ध के पश्चात् सम्पूर्ण सारस्वत प्रदेश वैभवहीन दिखता है। इड़ा मनु के व्यवहार से व्यथित हो विगत बातों के बारे में विचार कर रही है कि अचानक उसे करुणापूर्ण ध्वनि सुनाई देती है–

अरे! बता दो मुझे दया कर

कहाँ प्रवासी है मेरा ?

उसी बावले से मिलने को

डाल रही हूँ मैं फेरा।

इड़ा, श्रद्धा और उसके पुत्र मानव की दयनीय अवस्था को देख द्रवित हो उठती है। श्रद्धा को रोककर उसके दुख का कारण पूछती है। आत्मीयता पाकर श्रद्धा वहीं रुक जाती है। इतने में उसे अग्नि के आलोक में मनु दिखाई देते हैं। श्रद्धा बेसुध मनु को अपने प्रेममयी स्पर्श से होश में लाती है। बालक मानव अपने पिता को पाकर परमानंदित होता है–

'आत्मीयता घुली उस घर में

छोटा–सा परिवार बना,

छाया एक मधुर स्वर उस पर

श्रद्धा का संगीत बना।'

श्रद्धा अपने गीत 'तुमुल कोलाहल कलह में' से क्षुब्धता, विषाद, दुख से युक्त मनु के हृदय को शांति प्रदान करती है।

किन्तु पश्चात्ताप में डूबे मनु पुनः उन सबको छोड़कर चले जाते हैं। श्रद्धा ने मानव को इड़ा के पास छोड़ दिया और खोजते–खोजते मनु को पा गयी। अन्त में सारस्वत निवासी सभी लोग कैलास पर्वत पर जाकर श्रद्धा और मनु के दर्शन करते हैं।

<u>भावार्थ :–</u>

'तुमुल कोलाहल कलह में

मैं हृदय की बात रे मन!

विकल होकर नित्य चंचल,

खोजती जब नींद के पल;

चेतना थक–सी रही तब,

मैं मलय की बात रे मन!'

(तुमुल कोलाहल– तीव्र शोरगुल, घोर हंगामा। कलह– संघर्ष, झगड़ा। हृदय की बात– शान्ति प्रदान करने वाली मनोहर वाणी। विकल– बेचैन। नींद के पल– विश्राम का समय। चेतना– सचेतन प्राणी। मलय की बात– मलय पर्वत से आने वाली सुगन्धित हवा।)

भीषण संघर्ष से व्यथित घायल मनु को शांत करने–हेतु स्वयं के स्वरूप का निरूपण करते हुए श्रद्धा कहती है– हे मनु! आपसी संघर्ष के कारण संसार में व्याप्त तीव्र शोरगुल से व्यथित तुम्हारे मन को शान्ति प्रदान करने वाली मैं मनोहर वाणी हूँ। सांसारिक दुःखों से बेचैन होकर जब तुम्हारी चेतना थककर विश्राम के पल ढूँढती है तब मैं मलय पर्वत से आने वाली सुगन्धित हवा की भाँति तुम्हारे व्याकुल मन को शीतलता प्रदान करती हूँ।

अर्थात् आपसी द्वेष, घृणा, कलह इत्यादि के कारण संसार में सर्वत्र अशांति और कोलाहल व्याप्त है, ऐसे में सांसारिक मोहमाया में उलझे हुए मनुष्य का मन व्याकुल होकर सुकुन के पल चाहता है। इस स्थिति में हृदय की कोमल भावनाएँ ही मनुष्य की चेतना को शांति प्रदान करती हैं।

'चिर – विषाद विलीन मन की

इस व्यथा के तिमिर वन की;

मैं ऊषा – सी ज्योति – रेखा,

कुसुम विकसित प्रात रे मन!'

(चिर–विषाद विलीन – बहुत दिनों से दुःख में डूबा हुआ। व्यथा का तिमिर वन – वेदना से युक्त अंधकारपूर्ण वन। ज्योति–रेखा – प्रकाश की किरण। कुसुम विकसित प्रात– फूलों के समान खिली हुई प्रभात बेला।)

मनु की ही तरह मनुष्य का मन जब बहुत दिनों तक दुःख में डूबा रहता है तब उसके अंदर निराशा व्याप्त हो जाती है और उसे संसार से विरक्ति हो जाती है। ऐसे में श्रद्धा अर्थात् मनुष्य का हृदय–पक्ष मनुष्य के मन में आशा का संचार करता है। जिस प्रकार अंधकारपूर्ण वन में फूलों के समान खिली हुई प्रभात बेला में प्रकाशमयी किरण अंधकार को दूर करती है, उसी प्रकार व्यथित मनुष्य के मन में व्याप्त वेदना को दूर करने के लिए पुष्प के समान हृदय के कोमल भाव आशा और विश्वास के रूप में मनुष्य के मन में उत्पन्न हो उसे स्थिरता प्रदान करते है।

'जहाँ मरु – ज्वाला धधकती;

चातकी कन को तरसती;

उन्हीं जीवन – घाटियों की,

मैं सरस बरसात रे मन!'

(मरु–ज्वाला– रेगिस्तान की भीषण गरमी तथा वेदना की तीव्र आग। चातकी– एक पक्षी विशेष तथा आत्मा। कन– पानी की बूँद तथा आनन्द का कण। जीवन–घाटियाँ– जीव रूपी पर्वत की घाटियाँ। सरस– रसयुक्त तथा आनन्दयुक्त।)

जिस प्रकार रेगिस्तान की भीषण गरमी में प्यास से व्याकुल चातकी स्वाति नक्षत्र में बरसने वाली जल–कणों केलिए दिन–रात तरसती है उसी प्रकार वेदना की तीव्र आग से व्याकुल मनुष्य की आत्मा आनन्द के कण–कण को प्राप्त करने–हेतु पल–पल तरसती है। तब पर्वत की घाटियों में बरसने वाली बारिश के समान श्रद्धा (मनुष्य का हृदय–पक्ष) मनुष्य के जीवन में आनन्द की वर्षा कर उनकी आत्मा को तृप्त करती है।

'पवन की प्राचीर में रुक,

जला जीवन जा रहा झुक;

इस झुलसते विश्व–दिन की,

मैं कुसुम ऋतु–रात रे मन!'

(पवन– वायु, प्राण। प्राचीर– चहारदीवारी, शरीर। जला जीवन– वेदना की आग में झुलसता हुआ व्यथित जीवन। झुक– दीन–हीन हो कर। झुलसते विश्व–दिन– ग्रीष्म ताप की भाँति वेदना से जलता हुआ संसार रूपी दिन। कुसुम ऋतु– बसन्त ऋतु।)

जिस प्रकार ग्रीष्म ऋतु के प्रचंड ताप से झुलसकर मनुष्य चहारदीवारी के अंदर बंद हो दीन–हीन जीवन व्यतीत करने पर विवश होकर शीतलता की कामना करता है। उसी प्रकार वेदना की अग्नि में झुलसती आत्मा शरीर के अंदर बंद हो तड़पती हुई अपनी मुक्ति की कामना करती है। तब श्रद्धा (मनुष्य का हृदय–पक्ष) बसन्त ऋतु की शीतल रात्रि के समान मनुष्य के मन को सुख प्रदान करती है।

'चिर निराशा नीरधर से,

प्रतिच्छायित अश्रु–सर में;

मधुप मुखर मरन्द–मुकुलित,

मैं सजल जलजात रे मन!'

(चिर निराशा– अनन्त काल से आशा का पूर्ण न होना। नीरधर– बादल। प्रतिच्छायित– छाये हुए। अश्रु–सर– आँसुओं से भरा हुआ नेत्र रूपी तालाब।

मधुप– भँवरा। मुखर– ध्वनियुक्त। मरन्द– मकरन्द, पुष्परस। मुकुलित– खिला हुआ। सजल– सरस, सुन्दर। जलजात– कमल।)

जिस प्रकार सरोवर के ऊपर बादल तो छाये रहते है किन्तु बारिश नहीं होती और उसकी प्रत्याशा में सरोवर का जल कम होने लगता है तथा कमल सूख जाते है उसी प्रकार अनन्त काल से निराशा में व्याप्त मनुष्य का मन व्यथित हो उठता है और उसकी प्रसन्नता, उमंग, और उत्साह खत्म हो जाता है। तब श्रद्धा मधुर मकरन्द से युक्त कमल की तरह मनुष्य के मन में आशा का संचार करती है। जिस तरह जलयुक्त सरोवर में मधुर मकरन्द से युक्त खिले कमल की सुन्दरता पर रीझ कर भँवरे आंनद से गुँजार करते हैं उसी तरह निराशा में व्याप्त मनुष्य का मन हृदय में उत्पन्न मधुर भावों को पाकर आनंदित हो उठता है।

इस कविता में कवि ने मनुष्य के हृदय–पक्ष की श्रेष्ठता सिद्ध की है। जब मनुष्य का मन अत्यंत दुख, विषाद और वेदना के कारण निराशा के गर्त में चला जाता है तब उसके हृदय की कोमल भावनाएँ ही उसे संबल और आनंद प्रदान करती है।

सहायक पुस्तक :–

1. कामायनी – जयशंकर प्रसाद
2. हिन्दी साहित्य कोश – डॉ0 धीरेन्द्र वर्मा (प्रधान संपादक)